ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-8* November-2021
Anthology : The Research

रियासत कालीन बूंदी की आभूषण कला
State Carpet Bundi Jewelery Art

Paper Submission: 11/11/2021, Date of Acceptance: 23/11/2021, Date of Publication: 24/11/2021

सोन कुंवर हाडा
अतिथि संकाय,
इतिहास और विरासत
पर्यटन संग्रहालय पुरातत्व,
कोटा विश्वविद्यालय,
कोटा, राजस्थान, भारत

सारांश

अलंकार प्रियता सदैव से पृथ्वी के हर भाग मे मानव व देव की रूचिर ही है। सभी धर्म के सगुण देवताओं की प्रतिमाओ वचित्रों को आभूषण व अस्त्रशस्त्र से अलंकारित किया जाता रहा है। रियासत कालीन बूँदी मे भी कई प्रकार के आभूषणओ की झलक मिलती है। उस काल मे आभूषण जाति को दर्शाते थे, जो आज भी देखे जा सकते है।

The love of ornaments has always been the interest of human beings and gods in every part of the earth. The idols and paintings of the sagun deities of all religions have been adorned with ornaments and weapons. Many types of ornaments are also seen in Bundi, the princely state. The ornaments in that period represented caste, which can be seen even today.

मुख्य शब्दः खिचड़ी, चूपे, मीनाकारी, बगड़ी, पोची।

Keywords: Khichdi, Chupe, Meenakari, Bagdi, Pochi.

प्रस्तावना

वृन्दी रियासत में विभिन्न आभूषणों की रचना स्वर्ण, रजत, हीरे, माणक, मोती, पन्ने, रत्न से लेकर पीतल, काँसे व लाख तक में की गई। यही नहीं, बून्दी में अष्ठ धातु मिश्रण का प्रयोग भी आभूषण निर्माण में मुख्यतः अंगूठी हेतु किया गया। यहाँ पौराणिक भारत के आख्यानों के समतुल्य पुरुष वर्ग भी आभूषणप्रिय था तलवार की मूठ कसे बलिष्ठ हाथ व युद्धोन्मत्त ग्रीवा तक कान्ती, सुन्दर स्वस्थ संबल मांसल शरीर, आकर्षक नाक-नक्श, रंग-बिरंगी राजस्थानी पोशाक और इनके ऊपर विविधाविध कलात्मक आभूषण नारी सौन्दर्य की अभिवृद्धि करते थे। राजस्थानी आभूषणों की स्वस्थ परंपरा यहाँ अब भी प्रचलित है।

यद्यपि इस पर आधुनिकता का पुट लग गया है और समारोहिक शृंगार में ही इनका उपयोग अधिक होने लगा है। हाड़ा राजवंश में भारी आभूषणों पर अत्यधिक व्यय[1] किया जाता था, क्योंकि राजवंश के सदस्य सभी उत्सवों, विवाहों अथवा अन्य राजपरिवारों[2] से भेंटों के अवसर पर अलंकारों का प्रचुर प्रयोग करने के अभ्यस्त थे। यह राजस्थान की सामान्य परम्परा भी थी, दूसरी ओर उत्सवों से विदा होते समय संबंधियों को खीचड़ी[3] प्रदान करने की परम्परा भी थी, जिसके निमित्त हल्के आभूषणों का निर्माण करवाया जाता था। स्वर्ण का अलंकरण अनेक शस्त्रास्त्रों तक पर करके स्थानीय कलाविदों ने अलंकारप्रिय संस्कृति का बहुमुखी परिचय भी दिया है।

बून्दी चित्र शैली में भी अनेक अलंकारों का दिग्दर्शन होता है। आलोच्यकाल में मुगल प्रभाव का आभूषणों पर अंगीकार किया जाना अन्य कलाओं के समन्वय की भाँति ही स्वाभाविक ही था। अग्रांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत विभिन्न आभूषणों का विवेचन है।

शीशफूल[4]

नारी के ललाट का यह स्वर्णाभूषण रत्नजड़ित था, कभी कभी रत्नविहीन ठोस स्वर्ण का भी होता था। यह लगभग तीन से चार स लम्बा, वृत्ताकार ठोस स्वर्ण अथवा स्वर्ण के पत्र का होता था। इसके मुख भाग में रत्न जड़े होते थे, नगीना श्वेत गहरा गुलाबी होता था। स्वर्ण की सतह पर बारीक मोनाकारी भी होती थी।

सुरमंग व टीका[5]

सुरमंग सुहागिन की माँग में पिराई जाने वाली मोतियों की लड़ होती है जो ललाट पर लटकते हुए टीके को बांधे व सन्तुलित किए रहती है। टीका स्वर्ण की गोलाकार काटी गई पत्री होती है जो हिन्दू धर्म प्रतीकों, यथा-पुष्प, मयूर, बेल-बूँटे आदि की आकृति में तराशा जाता है। इसका सौन्दर्य उत्कीर्ण करने की अपेक्षा इन आकृतियों के यथावत् निर्माण में है। इसके निचले भाग पर मोतियों की छोटी झालर झिलमिल दमकती है। सामान्यतः टीके का प्रचलन ओसवाल, अग्रवाल आदि के अतिरिक्त मुस्लिम महिलाएँ भी करती थीं।

रखड़ी या राखड़ी[6]

यह 1 इंच लम्बा व वृत्ताकार स्वर्णाभूषण है। मात्र मुखाग्र ही रत्नजड़ित होता है। शेष भाग ठोस स्वर्ण अथवा लाख भरे हुए स्वर्ण पत्रों का होता है। बून्दी में रखड़ी सामान्यतः वणिक व राजपूत वर्ग में अधिक प्रचलित थी। इसमें प्राय 1 तोले से लेकर 5 तोले तक स्वर्ण रहता था।

वृन्दी रियासत में विभिन्न आभूषणों की रचना स्वर्ण, रजत, हीरे, माणक, मोती, पन्ने, रत्न से लेकर पीतल, काँसे व लाख तक में की गई। यही नहीं, बून्दी में अष्ठ धातु मिश्रण का प्रयोग भी आभूषण निर्माण में मुख्यतः अंगूठी हेतु किया गया। यहाँ पौराणिक भारत के आख्यानों के समतुल्य पुरुष वर्ग भी आभूषणप्रिय था तलवार की मूठ कसे बलिष्ठ हाथ व युद्धोन्मत्त ग्रीवा तक कान्ती, सुन्दर स्वस्थ संबल मांसल शरीर, आकर्षक नाक-नक्श, रंग-बिरंगी राजस्थानी पोशाक और इनके ऊपर

विविधाविध कलात्मक आभूषण नारी सौन्दर्य की अभिवृद्धि करते थे। राजस्थानी आभूषणों की स्वस्थ परंपरा यहाँ अब भी प्रचलित है।

यद्यपि इस पर आधुनिकता का पुट लग गया है और समारोहिक शृंगार में ही इनका उपयोग अधिक होने लगा है। हाड़ा राजवंश में भारी आभूषणों पर अत्यधिक व्यय[1] किया जाता था, क्योंकि राजवंश के सदस्य सभी उत्सवों, विवाहों अथवा अन्य राजपरिवारों[2] से भेंटों के अवसर पर अलंकारों का प्रचुर प्रयोग करने के अभ्यस्त थे। यह राजस्थान की सामान्य परम्परा भी थी, दूसरी ओर उत्सवों से विदा होते समय संबंधियों को खीचड़ी[3] प्रदान करने की परम्परा भी थी, जिसके निमित्त हल्के आभूषणों का निर्माण करवाया जाता था। स्वर्ण का अलंकरण अनेक शस्त्रास्त्रों तक पर करके स्थानीय कलाविदों ने अलंकारप्रिय संस्कृति का बहुमुखी परिचय भी दिया है।

बून्दी चित्र शैली में भी अनेक अलंकारों का दिग्दर्शन होता है। आलोच्यकाल में मुगल प्रभाव का आभूषणों पर अंगीकार किया जाना अन्य कलाओं के समन्वय की भाँति ही स्वाभाविक ही था। अग्रांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत विभिन्न आभूषणों का विवेचन है।

चूपे[13]

चीन में सोने का कवर दांतों की अग्र पंक्तियों में लगवाने का प्रचलन रहा है। बून्दीवासी नर-नारी दोनों सम्पन्नता व सौन्दर्य का वैसा ही प्रयोग सोने की चूपों के माध्यम से करते थे। इसमें दांत के आर-पार छिद्र में सोना भरा जाता था। इस प्रथा का सम्बन्ध बून्दीवासियों की इस धार्मिक धारणा से भी था कि स्वर्गारोहण से पूर्व मुख में स्वर्ण रख देने से पुनर्जन्म में सम्पन्नता सुनिर्धारित हो जाती है। ज्ञातव्य है कि यहाँ प्रायः मृतकों के शव के गृह त्याग करने से पूर्व उनके मुख में स्वर्ण का अंश रखा जाता था।

हंसली[14]

गले में पहना जाने वाला यह रजत आभूषण प्राय: जनसामान्य में अधिक प्रचलित था राजवंश व अभिजात्य वर्ग में इसका अस्तित्व नहीं था। यह अर्द्धगोलाकार ठोस चाँदी की बनाई जाती थी जिसका मध्य भाग मोटा व ग्रीवा के पीछे मुड़ते हुए भाग क्रमश: पतले होते जाते थे। इसका प्रचलन वर्तमान में भी दृष्टव्य है। यह किसी भी लोच से परे थी।

तमाणियाँ[15]

"यह आभूषण कण्ठ में लटका रहता था। इसे स्वर्ण रजत दोनों में 1 इंच या 2 इंच लम्बी पट्टिका सदृश्य बनाते थे जिनमें कलात्मक उभार होते थे जिन पर दानेदार तक्षण होता था। यह आभूषण भी जातिभेद का ऐतिहासिक प्रमाण सौन्दर्य लोकित रूप में देता है। प्रायः उच्च वर्ग में तमणियाँ को हरे रंग के चीलों (बारीक मोती) को पिरोए गए कलात्मक धागों द्वारा लटकाया जाता था। दूसरी ओर गुर्जर, बंजारे, मीर्णे, कालबेलियों आदि में नील वर्णों चीलों का प्रचलन था। यह आभूषण जोधपुर में आड़ कहलाता था।

पाँची[16]

कलाइयों में लगभग 3 चौड़ी स्वर्ण पट्टिका सदृश्य यह आभूषण ठोस स्वर्ण का व प्राय: अभिजात्य वर्ग में ही होता था। इस पर अंगूर के गुच्छे के समान कलात्मक उभार उकेरे जाते थे। कलाई में इसे मजबूत व कलात्मक धागे से दोनों सिरों से जोड़कर बांध कर पहना जाता था। एक सिरे पर हुक व दूसरे पर धातु का ही गोलाकार पिण्ड सदृश्य होता है जिन्हें परस्पर फँसा कर इसकी सुरक्षा की जाती है। इसमें रत्नों की जड़ाई भी की जा सकती थी। इसमें न्यूनतम 4 तोला स्वर्ण प्रयुक्त किया जाता था। इसी नमूने की रजत की पाँची भी बून्दी के कतिपय वर्गों में प्रचलित थी।

बँगड़ी[17]

पाँची के उपरान्त कलाइयों में बगड़ी नामक स्वर्ण आभूषण सुशोभित होता था। यह चूड़ी सदृश्य ठोस स्वर्ण की अथवा लाख भरी हुई होती थी। चूड़ी से इसमें विभिन्नता यह थी कि इसके दोनों मुख खुले होते थे जिन पर भिन्न पशुमुख स्वर्ण में निर्मित होते थे। गज, सिंह, घड़ियाल, मयूर आदि इनमें प्रमुख थे। राजपूतों में पौंची बंगड़ी एक साथ अंगीकार करने की परम्परा थी।

गजरे[18]

स्वर्ण के चूड़ी सदृश्य गजरे कलाई की शोभा बढ़ाते थे। इसे वर्गाकार बनाकर इस पर मोती जड़ना भी प्रचलित था।

हथफूल[19]

नारी दोनों हथेलियों के पृष्ठ भाग को स्वर्ण अथवा रजत की पुष्प प्राकृतियों व लताओं से अलंकृत करने वाला यह आभूषण पाँचों अंगुलियों में अंगूठियों से आरंभ होता है तथा पतली कड़ियों द्वारा स्वर्ण निर्मित डिजाइन से जुड़ता है तत्पश्चात् चूड़ियों से जुड़ता है।

वाजूबन्द

बाजूबन्द चाँदी व स्वर्ण के बनाए जाते थे। जिसे स्त्री-पुरुष • सुरुचि पूर्ण रीति से भुजाओं में धारण करते थे। यह अधिकांशत ठोस सोने या चाँदी का वर्गतुलाकार बना होता था तथा रत्नजड़ित भी बनाया जाता था। भुजाओं में कसने के लिए बाजूबन्द के दोनों मुखों पर काली ताणी का उपयोग किया जाता था तथा काली ताणी को सुसज्जित लाल, काले, हरे, गुलाबी रेशम या ऊन केबाँधे जाते थे। कालबेलिए, बंजारे कोडियों के भुजबन्द उपयोग में लाते थे।

पदाभूषण

बून्दी राज्य के पदाभूषण में प्रमुख आंवला, टनका, नैवरी थे। ये सोने व चाँदी दोनों ही धातुओं से बनाये जाते थे परन्तु सोने के पदाभूषण मात्र नरेश द्वारा विरुद प्राप्त व्यक्ति ही कर सकता था जो समकालीन सोना ताजिम कहलाता था।
राजपूताना राज्यों में प्रचलित पदाभूषणों से बून्दी राज्य के पदाभूषण अपेक्षाकृत नीमर (ठोस) होते थे।

तुर्रा[20]

सामान्यतः राजा ही प्रयुक्त करते थे। यह स्वर्णिम तारों को गूंथ कर बनाई जाती थी। तुर्रा के केन्द्र में स्वर्णिम तारों द्वारा निर्मित कलंगी होती थी। तुर्रा पगड़ी अथवा साफे के मध्य में सटा कर व्यवस्थित किया जाता था। कलंगी अंग्रेजी के अक्षर 'J' के उल्टे स्वरूप के समान होती थी।

सिरपेच[21]

इस आभूषण को जन सामान्य में कभी भी शिरोधार्य नहीं किया जाता था। इसे मात्र राजपरिवार के सदस्य अथवा उच्च श्रेणी के सामन्त वर्ग ही अंगीकार करते थे। इसके निर्माण हेतु स्वर्ण व हीरों का प्रयोग किया जाता था। इसका आधार समतल होता था। इसमें माणिक्य अथवा अन्य बहुमूल्य रत्नों को जड़ा जाता था जिनकी अनेक लड़े चकाचौंध करती हई लटकती थी। पांच लड़ियों वाला सिरपेच मात्र बून्दी नरेश के लिए ही अनुमोदित था। तीन लड़ियों वाले सिरपेच को सामन्तगण धारण करते थे।

कटि आभूषण

नारियाँ क्षीणकाय कटि को शोभान्वित करने के निमित कणकति करधनी अंगीकार करती थी। सामाजिक सहितानुसार कटि आभूषण मात्र विवाहिता हो अंगीकार करती थी। यह ठोस स्वर्ण की शलाका का वर्तुलाकार स्वरूप होता था जिस पर आकर्षण कुराई से भिन्न आकृतियाँ अंकित करके इसकी सौन्दर्य श्री में अभिवृद्धि की जाती थी।

लाख के आभूषण-चूड़े[22]

लाख को लाल, पीला, श्वेत, नीला, स्यामवर्ण, हरा इत्यादि रंगों से सम्मिश्रण करके कड़ों के रूप में गरम लाख को मोतियों व नगों से सुसज्जित किया जाता था। इसके अतिरिक्त लाख का उपयोग कर्णफूल, अंगूड़ियों आदि में भी किया जाता था। कभी-कभी धनाढ्य वर्ग में बहुमूल्य रत्नजड़ित लाक्षाभूषण धारण किए जाते थे।
बून्दी राज्य में वर्तमान समय में प्रचुर मात्रा में लाख का उपयोग होता में है।

विभिन्न सस्ती धातु के आभूषण

बून्दी राज्य के कलात्मक यशोगान व सांस्कृतिक अभिरुचि के चहुंमुखी व्याप्त वातावरण में जनसंख्या का एक बड़ा भाग जो मूल्यवान धातु का व्यय निहित करने में समर्थ न था किन्तु अलंकरण की अभिरुचि पर शारीरिक गठन के लाक्षणिक वैभव को आकर्षक बनाने की आकांक्षा उसमें विद्यमान थी। अतः ये लोग जस्ता, टिन, तांबा, लोहा, पीतल, कांसा आदि के पृथक्-पृथक् आभूषणों का उपयोग करते थे। कभी कभी दो या अधिक धातुओं के सम्मिश्रण से भी आभूषणों का निर्माण किया जाता था।

इन धातुओं के आभूषणों में मुख्यतः कुण्डल, लोंग, हार, कड़े, चूड़ियाँ, पायल, कणकती आदि प्रमुख थी।

उपर्युक्त आभूषणों में बून्दी चित्रकारों को अपनी तुलिका द्वारा अपने आपको संयोजित करने को प्रोत्साहित किया, दूसरी ओर यहाँ के नर-नारियों का सौन्दर्यानुराग में यत्र-तत्र फूट पड़ा। यही नहीं, इन आभूषणों की अनुकृति में वर्तमान काल तक अपेक्षाकृत अल्पभार के आभूषण समग्र राजस्थान में लोकप्रिय है। कालान्तर में जातिगत भेदभाव उत्तरोत्तर क्षीण होने से आभूषणों का सार्वजनिक स्वरूप भी निखरने लगा। ऐतिहासिक धरातल पर इस राज्य की समृद्धि व सांस्कृतिक चेतना का प्रसूत अध्ययन करने में पूर्वोक्त आभूषण समर्थ हैं।

उद्देश्य

विलुप्त होते आभूषणओ की ओर ध्यान आकर्षित करना व बूँदी की धरोहर को सहेजना।

निष्कर्ष

जन समान्य मे अनेक मांगलिक उत्सवओ और जीवन के विविध आनंदोलास के पल मे कलात्मक सामग्रीयों के प्रयोग का महत्व स्थाई रूप ले सके।वैभव पूण संस्कृति का विकास हो।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *बून्दी गढ़ रिकॉर्ड महकमा अंबार, बस्ता नं. 74, संवत् 1929, फाइल नं. 13*
2. *बून्दी गढ़ रिकॉर्ड, निजि महकमा*
3. *लक्ष्मणदासजी महिय्यारिया (हस्तलिखित व अप्रकाशित) कोटा राज्यका इतिहास, पृ. 49*
4. *चित्रशाला रासलीला*
5. *Handicraft of Rajasthan: Btusham Pal p. 5*
6. *उम्मेद महल में रामविवाह का चित्र*
7. *चित्रशाला, ढोला मारू*
8. *सुख महल, बून्दी- तीज की सवारी*

9. चित्रशाला, बून्दी-प्रेमाख्यान चित्र
10. Handicraft of Rajasthan-H. Btusham pal p. 5
11. वही पृ. 5
12. रानीजी के महल में अंकित चित्र
13. कुंवर माँगा
14. चित्रशाला, बून्दी-ढोला मारु
15. चित्रशाला, बून्दी-रामविवाह चित्र
16. वही।
17. चित्रशाला, बून्दी-रामविवाह चित्र
18. वही
19. वही
20. सुखमहल, बून्दी (जैत सागर पर बना) तीज की सवारी
21. वही
22. Handicraft of Rajasthan. H.P.N. 10